वेरिगाम्टो नवीन

बनाम

आंध्र प्रदेश सरकार व अन्य

सितंबर 18,2001

[न्यायाधिपति राजेंद्र बाबू और न्यायाधिपति डी. पी. मोहपात्रा]

खान और खनिज (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1957-धारा 4ए. खनिज रियायत नियम, 1960-नियम 37 (जैसा कि 20.2.1991 को संशोधित किया गया है)-खनन उप-पट्टा-20.2.1991 से पहले से प्रदान-इसे रद्द करने को चुनौती दी गई- मामले के लंबित रहने के दौरान उप-पट्टा की अवधि की समाप्ति-अभिनिर्धारित किया, मामला निष्फल हो गया, इसलिए खारिज कर दिया गया- उस अवधि के लिए हर्जाने का दावा जब खनन कार्य नहीं किया गया- उच्च न्यायालय ने छूटी हुई अवधि बढ़ाकर हर्जाना मंजूर कर दिया- अभिवचन कि धारा और नियम के तहत प्रावधानों का पालन नहीं करने के कारण, उप-पट्टा शुरू से ही शून्य था, इसलिए हर्जाने का हकदार नहीं था- अभिनिर्धारित किया कि, उप-पट्टा प्रदान करना शुरू से ही शून्य नहीं था- हालांकि मूल पट्टा की अवधि को बढ़ाया नहीं जा सकता था-हर्जाने के प्रश्न पर दीवानी अदालत में विचार किया जाना चाहिए।

खनन उप-पट्टा-प्रदान करने की तिथि ज्ञात नहीं है-इसे रद्द करने को चुनौती दी गई है-अभिनिर्धारित कि पट्टा, यदि 20.2.1991 के बाद दिया जाता है, तो प्रदान करने की तारीख सरकार को निर्धारित करनी होगी।

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226-न्यायिक समीक्षा-सरकार ने अनुबंध किया- अनुबंध रद्द करना-अभिवचन किया कि अनुबंध के मामलों में न्यायिक संवीक्षा की अनुमति नही है-अभिनिर्धारित कि, अनुमति योग्य है जबकि वतर्मान मामला विशुद्घ रूप से संविदात्मक क्षेत्र में नही आता है।

प्रत्यर्थी-राज्य ने आंध्र प्रदेश खनिज विकास निगम के पक्ष में खनन पट्टा प्रदान किया। इससे उप-पट्टा देने की अनुमति दी गई। इसके बाद उसने उप-पट्टा देने की अनुमति वापस ले ली। उप-पट्टेदारों ने अनुमति वापस लेने के खिलाफ उच्च न्यायालय में रिट याचिकाएं दायर कीं। उच्च न्यायालय ने याचिकाओं को इस आधार पर स्वीकार कर लिया कि राज्य ने खान और खनिज (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1957 की धारा 4ए और खनिज रियायत नियम 1960 के नियम 37 के तहत बताई गई प्रक्रिया का पालन नहीं किया था। आदेश के खिलाफ रिट अपील को पूर्ण पीठ ने इस शर्त पर खारिज कर दिया था कि राज्य तीन महीने के भीतर नियमों के अनुसार उप-पट्टों के संबंध में समाप्त करने का फैसला करेगा और यदि उक्त अवधि के भीतर कोई आदेश पारित नहीं किया गया ।

तब, यह उप-पट्टेदारों के लिए खनन करने की कार्यवाही करना खुला रहेगा अपील में, इस न्यायालय ने अपने अंतरिम आदेश द्वारा उप-पट्टेदारों

को निर्देश दिया कि खनन कार्य जारी रखें। अपीलों के लंबित रहने के दौरान, प्रत्यर्थी-राज्य ने पूर्ण पीठ के आदेश के अनुपालन में, अधिनियम और नियमों के तहत प्रदान की गई प्रक्रिया के अनुसार अपीलार्थियों को सुना, और अपीलार्थियों के खिलाफ निर्णय लिया। उप-पटटे सभी अपीलार्थीयों के पक्ष में जारी किये गये केवल एक अपीलार्थी को छोडकर जिसके लिए अवधि अपील विचारधीनता के दौरान या पहले ही समाप्त हो चुके थे। उस एक मामले में भी यह स्पष्ट नहीं था कि पट्टें के संबंध में उप-पटटे पर देने की सामान्य अनुमति नियम 37 के तहत दी गई या राज्य से कोई अलग अनुमति प्राप्त की गई थी। यह भी स्पष्ट नहीं था कि सहमति कब दी गई थी।

इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त अंतरिम आदेश पारित किए जाने के बाद, कुछ वर्तमान प्रत्यर्थीगणों ने उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाएं दायर कर उस अवधि जिसके दौरान वे उप-पट्टों के अवैध रूप से रद्द होने और उच्च न्यायालय के स्थगन आदेश के कारण खनन कार्य का संचालन करने में सक्षम नहीं थे उस अवधि के लिए मुआवजे का दावा किया। राज्य द्वारा यह तर्क दिया गया कि उप-पट्टा आदेशानुसार नहीं था क्योंकि राज्य सरकार को केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना पट्टा देने से रोक दिया गया या और चूंकि नियम 37 के तहत प्रावधान (जैसा कि 20.2.1991 पर संशोधित किया गया है) का पालन नहीं किया गया था। उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि याचिकाकर्ता क्षतिपूर्ति हेतु उत्तरदायी थे क्योंकि उप-पट्टा आदेशानुसार था और चूंकि यह 20.2.1991 से पहले दिया गया था, इसलिए नियम 37 लागू नहीं होता और इसलिए, राज्य और निगम को निर्देशित किया गया कि रिट याचिकाकर्ताओं को

लीज संपत्ति का कब्जा उस अवधि के लिए रखे जो अपने खनन संचालन को जारी रखने के लिए उन्होंने खो दिया था।

इस न्यायालय में अपील में राज्य सरकार और आंध्र प्रदेश राज्य खनिज विकास निगम ने तर्क दिया कि चूंकि उप-पटटे पर देने में केंद्र सरकार से कोई पूर्व अनुमति प्राप्त नहीं की गई थी और यह कि उप-पट्टा प्रांरभ से ही शून्य था, तब वाद विशुद्घ रूप से संविदा से बाहर उत्पन्न हुआ था, एंव मूल पटटा अवधि की समयावधि समाप्त होने से उप पटटे की अवधि नही बढाई जा सकती तब संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत दखल द्वारा आदेश वापिस नही लिया जा सकता।

अपीलों का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया

1. अपीलों में जहां खनन पट्टो का समय समाप्त हो गए थे, तथा जिन पटटों की शर्तें पहले ही समाप्त हो चुकी उनसे संबंधित अपील निष्फल हो चुकी केवल एक मामलें को छोडकर तबकि एक मामलें में यह साफ नही था कि पटटा कब प्रदान किया गया सरकार से सभी उप-पटटों के संबंध में पूर्व में सामान्य अनुमति नियम 37 के अन्तर्गत अनुसरित हुई या सरकार से अलग से सहमति प्राप्त की गई थी एंव किस दिनांक को उस मामलें में यह परीक्षित होना आवश्यक था। इस मामले में, उप पट्टा प्रभावित हो सकता है यदि यह 20.2.1991 से बाद में है, जब नियमों का संशोधित नियम 37 लागू हुआ, और यदि यह 20.2.1991 से पहले है, तो यह नहीं हो सकता हैः और यह सरकार के लिए खुला है कि वह उसके मामले में उचित कदम उठाए। अधिनियम की धारा 4 ए के तहत केंद्र सरकार की अनुमति के बिना पट्टा देने का प्रतिबंध राज्य

सरकार पर है न कि उस निगम पर जिसे राज्य सरकार पहले ही पट्टा दे चुकी है।

2. पट्टे के शुरू से ही अमान्य होने का सवाल इस मामले में नहीं उठता है। उप-पट्टों को देने की सहमति नियमों के नियम 37 में संशोधन के लागू होने से बहुत पहले दी गई थी और क्योंकि सभी उप-पट्टों में (एक को छोड़कर) जो केवल संशोधन की तारीख को अस्तित्व में आए थे) यह संशोधित नियम, जिसके लिए पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता थी - केंद्र सरकार की आवश्यकता नहीं है।

3.1. यह कहना उचित नहीं होगा कि यह मामला एक है विशुद्ध रूप से एक अनुबंध से उत्पन्न होने वाला मामला है और इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। सरकार की अपनी पसंद के किसी भी व्यक्ति के साथ व्यापार करने की स्वतंत्रता युक्तियुक्त और निष्पक्षता की शर्तों के साथ-साथ जनहित के अधीन है। किसी अनुबंध में प्रवेश करने के बाद, उस अनुबंध को रद्द करने में जो वर्तमान मामले की तरह वैधानिक प्रावधानों की शर्तों के अधीन है, यह नहीं कहा जा सकता है कि मामला विशुद्ध रूप से अनुबंध के क्षेत्र में आता है।

वाई. एस. राजा रेड्डी बनाम ए. पी. माइनिंग कॉर्पोरेशन लिमिटेड, (1988) 2 ए. एल. टी. 722; हर्षवर्धन बनाम उप उत्पाद शुल्क और कराधान आयुक्त, [1975] 1 एस. सी. सी. 737; राधाकृष्ण अग्रवाल बनाम। बिहार राज्य, ए.आई.आर (1977) एससी 1496; राम लाल और सन्स बनाम

राजस्थान राज्य, ए.आई.आर (1976) एससी 54; शिव शंकर दाल मिल्स बनाम हरियाणा राज्य, ए. आई. आर. (1980) एस. सी. 1037; रमणा बनाम आई. ए. भारतीय प्राधिकरण, ए. आई. आर. (1979) एस. सी. 1628; बशीशर नाथ बनाम आयकर आयुक्त, ए. आई. आर. (1959) एस. सी. 149; मेसर्स. द्वारकादास मारफतिया एंड संस बनाम बॉम्बे बंदरगाह के न्यासी मंडल, [1989] 3 एस. सी. सी. 293; महाबीर ऑटो स्टोर और अन्य बनाम भारतीय रेल निगम और अन्य [1990] 3 एस. सी. सी. 752 और श्रीलेखा विद्यार्थी बनाम यू. पी. राज्य, ए. आई. आर. (1991) एस. सी. 537, संदर्भित।

3.2 उच्च न्यायालय के लिए यह पता लगाने में कोई बाधा नहीं थी कि क्या अनुबंध का उल्लंघन होता है ताकि पक्षकार क्षति का दावा कर सकें या निगम या सरकार के दायित्व को पूरा कर सकें।

4.1. मूल पटटे की अवधि समाप्त होने के बाद उप-पट्टा की अवधि नहीं बढ़ाई जा सकती थी। उच्च न्यायालय को उप-पट्टा अवधि के विस्तार के लिए अपने विवेक का प्रयोग नहीं करना चाहिए था।

कल्याणपुर लाइम वर्क्स लिमिटेड बनाम बिहार राज्य और अन्य , ए.आई.आर (1954) एससी 165, पर भरोसा किया।

4.2 इस पहलू कि क्या इसके परिणामस्वरूप अनुबंध का उल्लंघन हुआ है जिसके लिए पीड़ित पक्ष हर्जाने का हकदार है, उच्च न्यायालय की टिप्पणियों

या निष्कर्षों से प्रभावित हुए बिना दीवानी मुकदमे में विचार करने या उनसे निपटने के लिए खुला छोड़ दिया जावे।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारिताः सिविल अपील सं 6656-6657/ 1994.

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय रिट अपील संख्या 132 ओर 133/1994 के निर्णय और आदेश दिनांक 2.9.94 से पारित

के साथ

वर्ष 1994 की सिविल अपील सं. 6658-6659, 6642-6646, 6647-6650 ओर 6651-6655

और

सिविल अपील संख्या 5115-5117/1996

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय रिट पीटिशन नंबर 22579,22580 और 22730/1994 के निर्णय एवं आदेश से दिनांक 04.03.1996 से पारित के साथ

सिविल अपील संख्या 5118-5120/1996

के. एन. रावल, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, एल. नागेश्वर राव, कपिल , सिब्बल, गुंटूर प्रभाकर, सुश्री टी. अनामिका, टी. वी. रत्नम, के. सुब्बा राव, इरशाद अहमद, के. राम कुमार, टी. जगदीश, जी. रामकृष्ण प्रसाद, जयनाथ मुथराज, एस. यू. के. सागर, शंभू नाथ सिंह, मनोज सक्सेना, श्री रामुल रेड्डी, वी. रेड्डी, प्रवीर चौधरी, ए. सुब्बा राव, अनिल

कुमार तांडले, इरशाद अहमद, आर. एन. केशवानी और सुश्री रानी छाबड़ा उपस्थित पक्षकारों के लिए।

न्यायालय का निर्णय न्यायाधिपति राजेन्द्र बाबू द्वारा दिया गया था

अपीलों के इन दो भागों में, अपीलार्थीगण ने उच्च न्यायालय की दो पूर्ण पीठों द्वारा दिए गए दो आदेशों पर सवाल उठाया गया-एक 2 सितंबर, 1994 को और दूसरा 4 मार्च, 1996 को।

सिविल अपील संख्या। 6656-6657 / 94 , 6658-6659 / 94 , 6642-6646 / 94 , 6647 6650/94 & 6651-6655 / 94

आंध्र प्रदेश सरकार ने 7.1.1974 को घोषणा की कि कडप्पा जिले के मंगमपेट और आनंदराजपेट में बेराइट अयस्क वाले क्षेत्र विशेष रूप से सार्वजनिक क्षेत्र में काम लेने के लिए आरक्षित हैं, हालांकि उन भूमि को छोड़कर जो पहले से ही निजी व्यक्तियों को पट्टे पर दी गई थीं। 10.2.1975 और 19.2.1983 पर जारी दो अधिसूचनाओं द्वारा, आंध्र प्रदेश सरकार ने आंध्र प्रदेश खनिज विकास निगम [इसके बाद 'निगम' के रूप में संदर्भित] के पक्ष में विभिन्न क्षेत्रों की एक सीमा तक खनन पट्टों को मंजूरी दी। 6.1.1991 को, आंध्र प्रदेश सरकार ने G.O.Ms.No 215 दिनांकित 22.4.1980 में उल्लिखित कुछ नियमों और शर्तों के अधीन निगम द्वारा उप-पट्टा पर प्रदान करने को अनुमति दी। आंध्र प्रदेश सरकार ने विभिन्न आदेशों द्वारा उप-पट्टा पर भूमि देने की अवधि का विस्तार मई 1991 तक किया। आंध्र प्रदेश सरकार ने 01-

12-1993 को सभी मौजूदा उप-पट्टों को समाप्त करने का निर्णय लिया ताकि निगम सीधे खनन कार्य कर सके। 07-12-1993 को सरकार ने निगम को कुछ क्षेत्रों के संबंध में उप-पट्टे देने के लिए पहले दी गई अनुमति वापस ले ली।

अपील के पहले भाग में अपीलकर्ताओं ने रिट के माध्यम से उच्च न्यायालय के समक्ष विभिन्न आधारों पर चुनौती दी जिसमें, विचाराधीन खनन भूमि को उप-पट्टा देने के लिए पहले दी गई अनुमति को वापस लेने वाली उक्त अधिसूचनाओं की वैधता और वैधानिकता। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिकाओं को इस आधार पर स्वीकार किया कि सरकार ने खान और खनिज (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1957 की धारा 4-ए (जिसे इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया गया है) और खनिज रियायत नियम, 1960 के नियम 37 (जिसे इसके बाद 'नियम' के रूप में संदर्भित किया गया है) के तहत विचार की गई उचित प्रक्रिया का पालन नहीं किया था। उसी के खिलाफ रिट अपीलों को प्राथमिकता दी गई और खंड पीठ ने मामले को पूर्ण पीठ के पास भेज दिया।

रिट अपील सं 131/94 134/94 और 169/94 से 175/94 तक में उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने 2.9.1994 को दिए गए आदेश द्वारा उसके समक्ष उठाए गए प्रश्नों की जांच की। पूर्ण पीठ ने सबसे पहले निगम द्वारा निष्पादित उप.पट्टा विलेख में धारा 15 और 16 के प्रभाव पर विचार किया। पूर्ण पीठ ने यह मत व्यक्त किया कि खंड 15 पट्टाधारक निगम के लिए पट्टा समाप्त करने का अधिकार सुरक्षित रखता है यदि पट्टा के नियमों और शर्तों का कोई उल्लंघन या चूक या अनुबंध का कोई उल्लंघन होता है और इसलिए, उच्च

न्यायालय ने महसूस किया कि यह किसी का मामला नहीं था कि निगम ने उप-पट्टों को पूर्व-परिपक्व रूप से समाप्त करने के लिए कदम उठाए हैं क्योंकि उस अधिकार के प्रयोग के लिए कोई भी शर्त उत्पन्न नहीं हुई थी। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि खंड 16 में केवल यह उपबंध किया गया है कि -उप-पट्टों को समाप्त करने की स्थिति में राज्य सरकार द्वारा नियमों के नियम 37 ए के तहत अनुमति वापस लेने के कारण कोई नुकसान होना था। पट्टों की अवधि के दौरान या किसी अन्य सरकारी कार्रवाई के कारण, उप-पट्टेदार को पट्टेदार निगम से हर्जाने का दावा करने से रोक दिया जाता है। इसलिए, पूर्ण पीठ ने महसूस किया कि न तो खंड 15 और न ही खंड 16 मामले की ओर आकर्षित है।

इसके बाद पूर्ण पीठ ने इस बात की जांच की कि क्या अधिनियम की धारा 4 ए(3) का अनुपालन किए बिना उप.पट्टे के समय से पहले निर्धारण का निर्देश देने या बिना नोटिस के उप.पट्टे के लिए सहमति वापस लेने का आदेश अमान्य है। निर्विवाद रूप से बैराइट्स एक प्रमुख खनिज है और धारा 4 ए(1) अधिनियम केवल प्रमुख खनिजों के मामलों में आकर्षित होता है और वर्तमान मामलों में राज्य सरकार अधिनियम की धारा 4 ए के तहत उपलब्ध उस शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकती थी क्योंकि वह केवल केंद्र सरकार के लिए आरक्षित थी।

इसके बाद पूर्ण पीठ ने रिट याचिकाकर्ताओं के पक्ष में निगम को उप.पट्टा देने के लिए दी गई सहमति को वापस लेने पर विचार किया। इस पहलू की जांच नियमों के नियम 37 के दायरे के संबंध में की गई

थी। नियम 37 इस प्रकार एक बार दी गई सहमति को वापस लेने का प्रावधान नहीं करता है और इसलिए सरकार और निगम इसे वापस लेने के लिए सरकार की कार्यकारी शक्ति पर भरोसा करते हैं जो कुछ भी नियमों के तहत किया जा सकता है उसे प्रावधान के अनुसार पूर्ववत किया जा सकता है। सामान्य खंड अधिनियम के इस पहलू पर भी पूर्ण पीठ ने महसूस किया कि अधिनियम के तहत केंद्र सरकार के विशेष अधिकार क्षेत्र में आने वाला एक प्रमुख खनिज होने के नाते राज्य की कार्यकारी शक्ति केवल विधायी शक्ति की सीमा तक ही विस्तारित हो सकती है। इसलिए राज्य सरकार को कोई कार्यकारी शक्ति उपलब्ध नहीं थी। सामान्य खंड अधिनियम के आधार पर उठाए गए तर्क पर यह माना गया कि यह केवल अनुमति देने और बिना किसी अन्य परिणाम के वापस लेने का एक साधारण मामला नहीं है। इसके अलावा अनुमति देने के मामले में जो प्रक्रिया प्रदान की गई थी उसी प्रक्रिया का पालन अनुमति वापस लेने के मामले में भी किया जाना चाहिए था लेकिन ऐसी प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया। उच्च न्यायालय इस बात से सहमत नहीं था कि शक्ति का प्रयोग उस प्रावधान के तहत था और यह मामले को निपटाने के लिए पूर्ण पीठ के लिए पर्याप्त था।

हालाकि पूर्ण पीठ ने कुछ अन्य तर्कों को ध्यान में लिया □□□□□□□ [1] वह कि नियमों के नियम 37 के तहत कोई सहमति राज्य सरकार द्वारा नहीं दी जा सकती थी और नियमों के नियम 59(1) के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए नियमों के नियम 58 के तहत आरक्षित क्षेत्र के किसी भी हिस्से के संबंध में पटटेदार निगम अेार रिट याचिकाकर्ता के बीच कोई उप पटटा दर्ज नही किया जा सकता था। [2] नियमों के नियम 37 के तहत अपेक्षित केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी प्राप्त नहीं की गई थी [3] जब तक लीज रद्द नहीं की जाती और सहमति वापस नहीं ली जाती तब

तक हाउस कमेटी की रिपोर्ट में बताई गई कमजोरियों और अनियमितताओं को बरकरार रखा जाएगा जिसके परिणामस्वरूप भारी सार्वजनिक क्षति होगी। पूर्ण पीठ ने इन तीन पहलुओं पर कोई राय व्यक्त नहीं की। पूर्ण पीठ ने इन पहलुओं की जांच करने से इनकार कर दिया क्योंकि ये उप-पट्टा रद्द करने में निगम की सहमति या आदेश वापस लेते समय सरकार के आदेश के दौरान इंगित किए गए आधार नहीं थे।

पूर्ण पीठ ने निम्नलिखित शर्तों में रिट अपीलों को खारिज कर दियाः

" हम इसे अपीलार्थियों के लिए खुला छोड़ते हैं यदि वे उप-पट्टों को समाप्त करने का प्रस्ताव करते हैं या सहमति वापस लेता है तथा उप पटटेदारों को नोटिस इसका कारण बताये जाने कि इस तरह की कार्रवाई क्यों नहीं की जानी चाहिए, उन्हें उनका स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने के लिए युक्तियुक्त समय प्रदान कर उसी पर विचार करें और कानून के अनुसार उचित आदेश पारित करें। इस उद्देश्य के लिए, हम पक्षों को आज से ३ महिने तक यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश देना उचित मानते है। अगर कारण बताओ नोटिस की पालना में तीन महिने की उक्त अवधि के भीतर कोई नया आदेश पारित नही किया जाता है तब उप पटटेदार उन्हें खनिज कार्य हेतु उप-पटटे पर दी गई अनुसार कायर्वाही करना खुला रहेगा। अपील के तहत आदेश तदनुसार संशोधित किए जाते है- संशोधन और टिप्पणियों की शर्तो के अंतर्गत अपील खारिज की जाती है, लेकिन मामलें की परिस्थितियों

में, हम पक्षों को निर्देश देते है कि वे अपना खर्चा स्वंय वहन करे।"

पूर्ण पीठ के निर्णय को ए.आई.आर. (1995) एपी 1 (आंध्र प्रदेश सरकार बनाम वाई. एस. विवेकानंद रेड्डी) में प्रतिवेदिता की गई।

इस आदेश के खिलाफ रिट याचिकाकर्ता, सरकार और निगम अपील में आए और इस अदालत ने अनुमति देते हुए दिनांक 06-10-1994 को निम्न शर्तो पर आदेश पारित कियाः-

> "उप-पट्टा रद्द करने और राज्य सरकार द्वारा निगम को उप-पट्टा देने के लिए अपनी सहमति वापस लेने के परिणामस्वरूपए उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में इसे शून्य माना है आगे दिए गए निर्देश का संचालन उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा फैसले की तारीख से तीन महीने की अवधि के लिए यथास्थिति बनाए रखने का आदेश दिया गया है तथा जिसका अर्थ है कि उप-पट्टा तब तक खनन कार्यों को जारी रखने का हकदार नहीं होगा तथा रोक रहेगी। .हालाँकि पट्टेदारों को खनन कार्य का सही और विश्वसनीय लेखा-जोखा रखना होगा जिसे प्रत्येक पखवाडा उचित खनन अधिकारी द्वारा सत्यापित किया जाएगा। यह स्पष्ट किया जाता है कि निगम व राज्य सरकार अपने अधिकारों को विधि अनुसार प्रयोग करने से उच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा नही रोका गया है।"

इसके बाद, इन कार्यवाहियों के लंबित रहने के दौरान, आंध्र प्रदेश सरकार ने नोटिस जारी किए और उनके जवाब प्राप्त होने पर, अपीलार्थियों को सुना, जो मूल रिट याचिकाकर्ता हैं, और उनके खिलाफ फैसला किया। उस निर्णय के खिलाफ, केंद्र सरकार [न्यायाधिकरण] और केंद्र सरकार [न्यायाधिकरण] के समक्ष नियमों के नियम 35 के साथ पठित अधिनियम की धारा 30 के तहत पुनरीक्षण याचिकाएं दायर की गईं, 9.9.1998 को दिये गए अपने आदेश द्वारा उक्त पुनरीक्षण याचिकाओं को खारिज कर दिया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि केवल एक याचिकाकर्ता, सी.एम. रामनाथ रेड्डी ने अकेले रिट पिटीशन संख्या 36884/98 ओर 366885/98 केन्द्र सरकार के उस आदेश के विरूद्घ प्रस्तुत की एंव वे लंबित रही है। रिट याचिकाकर्ताओं के पक्ष में जारी किए गए उप-पट्टों का विवरण इस प्रकार हैः

उप पट्टेदार का नाम	राज्य सरकार की अनुमति संख्या एवं दिनांक	सर्वेक्षण संख्या	क्षेत्र	उप पट्टा विलेख के निष्पादन की तिथि	समाप्ति तिथि
1 श्री के. शिवानंद रेडडी (स्वर्गीय श्री के. ओबुल रेड्डी के कानूनी	मीमो नं. 1515/एम.III/80-1/28-08-1980	70/5 बी और सी	0.8741 हेक्टेयर	03-09-1980	21-09-1998

उत्तराधिकारी)					
2. श्री वाई.एस. राजा रेड्डी	जी.ओ.एमएस. नं.455/ 19-7-1982	133/1 से 9 भाग 134@1 से 6 भाग	3.102 हेक्टेयर	20-07-1982	18-02-1995
3. श्री सी.एम. रामानाथ रेड्डी	मीमो नं. 1935/एम.III/80-1/19-09-1984	70@1] 71@2 भाग	0.2064 हेक्टेयर	29-09-1984	19-09-1998
4. श्री सी.एम. रामानाथ रेड्डी	मीमो नं. 1973/एम.III/80-1/19-09-1984	70@6 भाग] 74@4] 74@5] 70@7]69 @3 भाग o 70@5 भाग	0.1660 हेक्टेयर	29-09-1984	19-09-1998
5. श्री सी.एम. रामानाथ रेड्डी	मीमो नं. 1940/एम.III/80-1/19-09-1984	74@1 भाग] 74@2 भाग o 74@8	0.8503 हेक्टेयर	29-09-1984	21-09-1998

		भाग			
6. श्री सी.एम. रामानाथ रेड्डी	मीमो नं. 1614/एम.III/80-1/19-09-1984	75@1	0.3800 हेक्टेयर	29-09-1984	01-09-1998
7. श्री सी.एम. रामानाथ रेड्डी	मीमो नं. 2085/एम.III/80-1/19-09-1984	63@2	0.8800 हेक्टेयर	29-09-1984	17-06-1998
8. श्री सी.एम. रामानाथ रेड्डी	जी.ओ.एमएस. नं.441/ 05-11-1990	75@2 से 5] 78@8 से 10] 111 भाग] 112	एकड 4.845 (1.9607 हेक्टेयर)	08-11-1990	18-02-1995
9. श्री वाई.एस. विवेकनंदा रेड्डी मैसर्स विजयालक्ष्मी मिनरल ट्रेडिग कंपनी	जी.ओ.एमएस. नं.194/ 01-06-1991	71@1] 72@3, भाग] 72@6 भाग] 37@6 भाग] 37@4	एकड 4.49 (1.8170 हेक्टेयर)	04-06-1996	18-02-1995

		भाग] 124 भाग] 114 भाग] 115 भाग			
10. श्री के. राजा मोहन रेड्डी	जी.अेा.एमएस. नं.148/25-04-1991	79	एकड 1.90 (0.7525 हेक्टेयर)	08-05-1991	18-02-1995

इन सभी मामलों में जारी किये गये उप- पट्टे केवल एक वी. रामलिंगथा को छोडकर जो सर्वेक्षण स. 83/1, 8 से 10, 84/2 20 और 22 जिसकी माप 1 एकड 89 सेन्ट, वर्ष 1985 या 1988 में पहले ही समाप्त हो गये है तथा सी. एस. रामानाथ रेड्डी के मामले में यह जून 1998 में समाप्त हो गये थे व अन्य के मामलों में सितम्बर 1998 में समाप्त हो गये थे। रिट याचिकाओं में मांगी गई राहत उप पट्टो को रद्द करने के संबध में है। उस पहलू पर रिट याचिकाकर्ता सफल रहे जबकि सरकार ओर निगम उनके द्वारा की गई कार्यवाही को कायम नही रख सके। अब जब खनन पट्टे समय के साथ समाप्त हो गये है और उन उप पट्टो की अवधि पहले ही समाप्त हो चुकी है तो इन अपीलों में दिए गए विभिन्न तर्को की जांच करना एक अकादमिक अभ्यास होगा। इसलिए हमारा विचार है कि निजी पक्षों या सरकार और निगम द्वारा दायर की गई ये अपीले निरर्थक हो गई है।

इस प्रकार श्री वी. रामलिंगैया के मामले को छोड़कर, अपीलों के पहले सेट को निरर्थक मानकर निपटाया जाता है।

रिकॉर्ड पर उपलब्ध तथ्यों से श्री वी. रामलिंगैया ने दिनांक 17-05-1991 को सर्वे संख्या में 83/1, 8 से 10, 84/2, 20 और 22, माप लगभग 1 एकड़ 89 सेंट उस पटटे पर प्राप्त की । यह स्पष्ट नहीं है कि क्या यह पट्टा नियम 37 के तहत सभी उप-पट्टों के संबंध में सरकार से प्राप्त पूर्व सामान्य अनुमति के अनुसार दिया गया है या सरकार से कोई अलग अनुमति प्राप्त की गई थी और किस तारीख को दी गई थी। इसलिए यह जांचना जरूरी हो जाता है कि उनके मामले में सहमति कब दी गयी। सरकार को यह निर्धारित करने दें कि क्या इस मामले में सहमति नियम के नियम 37 में संशोधन के बाद दी गई है। उप.पट्टा प्रभावित हो सकता है यदि यह 20.2.1991 के बाद का है जब नियमों का संशोधित नियम 37 प्रभावी हुआ और यदि यह 20.02.1991 से पहले है तो यह नहीं हो सकता है और यह सरकार के लिए खुला है उसके मामले में उचित कदम उठाए।

सिविल अपील संख्या 5115-5117 / 96 & 5118-5120 / 96

इनमें से प्रत्येक मामले में उप-पट्टों की अवधि 18.02.1995 को या सितंबर 1998 में अलग-अलग तारीख पर या एक पट्टे के मामले में 17.6.1998 को समाप्त हो गई। इसके बाद उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिकाओं का एक और सेट दायर किया गया। मामलों के उस समूह में तर्क यह दिया गया है कि राज्य सरकार द्वारा उप-पट्टों को अवैध रूप से रद्द करने और सहमति वापस लेने के कारण रिट याचिकाकर्ता पर्याप्त अवधि तक खदानों में

काम नहीं कर सके और उच्च न्यायालय द्वारा यथास्थिति बनाए रखने के लिए दिए गए आदेशों के कारण ऐसा नही कर सके और इस अदालत द्वारा 06.10.1994 को निर्देश दिए जाने के बाद ही उन्होंने संचालन शुरू किया। जिसके बाद ही वे खनन कार्य फिर से शुरू कर सकते थे और उन्होंने दावा किया कि वे अवधि के निकल जाने व उचित अनुतोष के हकदार हैं। उच्च न्यायालय ने अपना निर्णय मामले में पूर्ण पीठ द्वारा वाई०एस० विवेकानन्द रेडडी में दर्ज किए गए निष्कर्षों पर आधारित किया जिस मामले में कहा गया कि राज्य सरकार द्वारा उप-पट्टे देने और उन्हें रद्द करने की सहमति को वापस लेना शून्य है।

निम्नलिखित शर्तों में रिट याचिकाओं द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष दो मुद्दे उत्पन्न किए गए थे-

1. क्या राज्य सरकार द्वारा सहमति को अवैध रूप से वापस लेने और उप.पट्टों को रद्द करने के कारण खनन संचालनकार्य की अवधि के नुकसान के लिए उप.पट्टाधारक मुआवजे के हकदार हैं और

2. यदि यह माना जाता है कि वे मुआवज़ा पाने के हकदार हैं, तो क्या मुआवज़ा पट्टे की पूरी की गई अवधि को अवैध रुकावटों से खोई गई अवधि को जोड़कर माना जाएगा।

रिट याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि 17.12.1993 से 06.10.1994 की अवधि के लिए रुकावटें थीं और रिट याचिका संख्या 22730/94 में 02.01.1991 से 18-06-1991 तक छह महीने और सोलह दिनों की अवधि तक स्टे आदेश के कारण राज्य सरकार और निगम द्वारा उनके पक्ष में दिए गए उप.पट्टों बाबत अतिरिक्त नुकसान हुआ था।

राज्य की ओर से इस दलील का जवाब देते हुए कि राज्य सरकार केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के अलावा किसी भी व्यक्ति को खनन पट्टा नहीं देगी। उच्च न्यायालय ने कहा कि प्रतिबंध खनन पट्टा देने पर है। राज्य सरकार पहले ही निगम के पक्ष में उप-पट्टे दे चुकी है और राज्य सरकार रिट याचिकाकर्ता के पक्ष में विचाराधीन भूमि को पट्टे पर नहीं दे रही है। उप-पट्टा निगम द्वारा प्रदान किया गया है जिसे पट्टे पर पहले ही दिए जा चुके हैं और इसलिए उप-पट्टा देना आदेश से है। हालाँकि नियमों के नियम 37 पर भरोसा किया गया था। जिसे 20.02.1991 को पर्याप्त रूप से संशोधित किया गया था और यह शर्त लगाई गई थी कि पट्टेदार राज्य सरकार की लिखित पूर्व सहमति के बिना और खनन पट्टे नहीं देगा। अधिनियम के प्रथम अनुसूची में निर्दिष्ट किसी भी खनिज के संबंध में केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना, आवंटित करना, उप किराये पर देना , गिरवी रखना, या किसी अन्य तरीके से खनन पट्टा या उसमें कोई अधिकार शीर्षक या ब्याज हस्तांतरित करना या उसमें प्रवेश करना कोई प्रामाणिक व्यवस्था अनुबंध या समझौता नही करेगा । फरवरी 20, 1991 से पहले दिए गए उप-पट्टों को देखते हुए उच्च न्यायालय ने माना कि रिट याचिकाकर्ताओं के मामले में नियम 37 लागू नहीं था उन्हें मुआवजा दिया जाना चाहिए और माना गया कि कोई भी पट्टा मुआवजा उनकी राय में कोई भी क्षति उचित और उपयुक्त नहीं होगी और आगे यह माना गया कि सरकार और निगम रिट याचिकाकर्ताओं को उनके खनन कार्यों को जारी रखने के लिए पट्टे की संपत्ति पर कब्जा करने के लिए उत्तरदायी थे। जो कि उन्होंने 17.12.1993 से 06.10.1994 तक और याचिकाकर्ता के मामले में रिट याचिका संख्या

22730/94 02.01.1991 से 18.06.1991 तक सभी मामलों में खो दिया है। यही वह आदेश है जो अपीलों के इस सेट में हमारे सामने चुनौती में है।

सरकार और निगम की ओर से निम्नलिखित तर्क उठाए गए हैंः-

1. उप-पट्टा, जो कि एक प्रकार का पट्टा भी है, देने के लिए केंद्र सरकार से कोई पूर्व अनुमति नहीं ली गई है। जो अधिनियम की धारा 4.ए या नियमों के नियम 37 के तहत शुरू से ही शून्य है।

2. रिट अपील संख्या 131/1994 में दिए गए निर्णय और पूर्ण पीठ द्वारा संयोजित मामलों में कोई प्रश्न तय नहीं किया गया था और उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ यह नहीं मान सकती थी कि पट्टों की वैधता या अन्यथा निर्णित की जा चुकी है।

3. उप.पट्टे के अनुबंध की शर्तों के तहत भी रिट याचिकाकर्ता क्षतिपूर्ति के हकदार नहीं हैं।

4. विनिदिष्ट अनुपालना के लिए आदेश भी पारित नहीं किया जा सकता था, जो कि विशुद्ध रूप से संविदात्मक क्षेत्र में उत्पन्न होने वाला मामला है।

5. पटटे की समाप्ति के बाद संपत्ति की बहाली बिल्कुल भी उपलब्ध नहीं है।

अधिनियम की धारा 4 ए के तहत केंद्र सरकार की अनुमति के बिना पट्टा देने का प्रतिबंध राज्य सरकार पर है न कि उस निगम पर जिसे राज्य सरकार पहले ही पट्टा दे चुकी है। इसलिए लीज शुरू से ही शून्य होने का सवाल ही पैदा नहीं होगा। उप-पट्टे देने की सहमति नियमों के नियम 37 में संशोधन के लागू होने से बहुत पहले दी गई थी और यहां तक कि सभी उप.पट्टों में (वी.एस.

रामलिंगैया के मामले को छोड़कर) जो मई, 1991 में अस्तित्व में आये थे। 20.02.1991 के बाद (संशोधन की तारीख) इस संशोधित नियम के लिए केंद्र सरकार की पूर्व मंजूरी की आवश्यकता नहीं है और इसलिए यह तर्क उत्पन्न नही होगा कि उप-पट्टे प्रांरभ से शून्य हैं। इसलिए इस पहलू पर पूर्ण पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही है।

इस सवाल पर कि उच्च न्यायालय द्वारा मांगी गई और दी गई राहत पूरी तरह से संविदात्मक क्षेत्र में उत्पन्न होती है और इसलिए उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करना चाहिए था। अपने निणर्य को आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा वाई.एस. राजा रेड्डी बनाम ए.पी. माइनिंग कॉर्पोरेशन लिमिटेड (1998)2 एएलटी 722, और हरशंकर बनाम डिप्टी एक्साइज एंड टैक्सेशन कमिश्नर में इस अदालत के फैसले [1975],1 एससीसी 737; राधाकृष्ण अग्रवाल बनाम बिहार राज्य एआईआर [1977] एससी 1496; राम लाल एंड संस बनाम राजस्थान राज्य एआईआर [1976] एससी 54; शिव शंकर दाल मिल्स बनाम हरियाणा राज्य एआईआर [1980] एससी 1037; रमन्ना बनाम आई.ए. भारतीय प्राधिकरण एआईआर [1979] एससी 1628; बशीशर नाथ बनाम आयकर आयुक्त एआईआर [1959] एससी 149 पर आधारित माना। यद्यपि न्यायालय द्वारा राधाकृष्ण अग्रवाल के मामले में उत्पन्न होने वाले इस प्रकार के मामलों का एक सेट इस न्ययालय द्वारा प्रस्तुत किया गया है, लेकिन संविदात्मक क्षेत्र में न्यायिक समीक्षा की धारा में बहुत पानी बह चुका है। ऐसे मामलों में जहां निर्णय लेने वाले प्राधिकारी ने अपनी वैधानिक शक्ति को पार कर लिया है या

ऐसी शक्ति के प्रयोग में प्राकृतिक न्याय के नियमों या सिद्धांतों का उल्लंघन किया है या उसका निर्णय विकृत है या एक तर्कहीन आदेश पारित किया है, इस न्यायालय ने पक्षकारों के व सरकार के बीच हुए अनुबंध के बाद भी हस्तक्षेप किया है।

हम इन न्यायालय के तीनो निर्णयों मैसर्स द्वारकादास मार्फटिया एंड संस बनाम बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज़ ऑफ़ द पार्ट ऑफ़ बॉम्बे [1989] 3 एससीसी 293; में महाबीर ऑटो स्टोर्स एवं अन्य बनाम इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन एवं अन्य [1990], 3 एससीसी 752 और श्रीलेखा विद्यार्थी बनाम यूपी राज्य एआईआर [1991] एससी 537 की तरफ ध्यान दिला सकते है। जहां अनुबंध के उल्लंघन में वैधानिक दायित्व का उल्लंघन शामिल है जब शिकायत की गई आदेश वैधानिक प्राधिकारी द्वारा वैधानिक शक्ति के प्रयोग में किया गया था हालांकि कार्रवाई का कारण उत्पन्न होता है या अनुबंध से संबंधित है, सार्वजनिक कानून के दायरे में लाता है क्योंकि प्रयोग की गई शक्ति अनुबंध से अलग है। अपनी पसंद के किसी भी व्यक्ति के साथ व्यापार में प्रवेश करने की सरकार की स्वतंत्रता तर्कसंगतता और निष्पक्षता के साथ-साथ सार्वजनिक हित की शर्तों के अधीन है। किसी अनुबंध में प्रवेश करने के बाद उस अनुबंध को रद्द करने में जो वैधानिक प्रावधानों की शर्तों के अधीन है जैसा कि वर्तमान मामले में है। यह नहीं कहा जा सकता है कि मामला पूरी तरह से अनुबंध क्षेत्र में आता है। इसलिए हमें नहीं लगता कि यह सुझाव देना उचित होगा कि मौजूदा मामला पूरी तरह से एक अनुबंध से उत्पन्न मामला है और इसलिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। यह तर्क भी खारिज कर दिया गया है।

तथ्य यह है कि उप-पट्टों को रद्द करना या सहमति वापस लेना उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले के आदेश से शून्य है। इस न्यायालय ने अपने

अंतरिम आदेश दिनांक 6.10.1994 में भी देखा है और इसलिए उच्च न्यायालय उसके आधार पर अपने आदेश में कार्यवाही करना गलत नहीं है।

इसलिए उच्च न्यायालय के लिए यह पता लगाने में कोई बाधा नहीं थी कि क्या अनुबंध का उल्लंघन हुआ है ताकि पक्ष क्षतिपूर्ति का दावा कर सकें या निगम या सरकार की देनदारी को पूरा करने में सक्षम हो सके।

सुविधा के लिए हम पहले इस प्रश्न की जांच करेंगे कि मूल अवधि समाप्त होने के बाद पट्टे या उप-पट्टे की अवधि बढ़ाने में उच्च न्यायालय द्वारा विवेक का प्रयोग कैसे किया गया।

कल्याणपुर लाइम वर्क्स लिमिटेड बनाम बिहार राज्य एवं अन्य एआईआर [1954] एससी 165 में सरकार ने लाइम कंपनी के साथ एक अनुबंध किया था और जब उसने उक्त अनुबंध में प्रवेश किया तो उसका शीर्षक अपूर्ण था क्योंकि पिछले पट्टे के अस्तित्व के दौरान किसी को नया पट्टा नही दे सकती थी ओर जब अन्य पक्षकार के हक में दिये पटटे की अवधि समाप्त हो गई तब सरकार की राह में आने वाली बाधा दूर हो गई और लाइम कंपनी को अपने पक्ष में पट्टे को पुनर्जीवित करने का अधिकार देने का आग्रह किया गया। यह माना गया कि हालांकि मामले में विनिर्दष्ट अनुतोष अधिनियम 1877 की धारा 18 लागू थी। लेकिन चूंकि पट्टे की पर्याप्त अवधि पहले ही समाप्त हो चुकी थी, अनुतोष केवल विनिर्दष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 15 के तहत ही दी जा सकती थी। इसलिए उस मामले में इस न्यायालय ने यह नहीं सोचा कि यह विनिर्दष्ट अनुपालना की डिक्री देने के लिए उपयुक्त मामला था क्योंकि पट्टे का असमाप्त भाग समाप्त होने में केवल कुछ महीने बचे हैं। वास्तव में जब तक न्यायालय के आदेश के अनुसरण में पट्टे को बढ़ाया जाएगा तब तक उत्खनन कार्य जारी रखना शायद ही सार्थक होगा।

मूल पट्टे की अवधि समाप्त होने के बाद उप-पट्टे की अवधि क्यों नहीं बढ़ाई जा सकती इसके कम से कम तीन महत्वपूर्ण कारण हैं और वे हैंः-

(i) अधिकांश वर्तमान मामलों में जिस रुकावट के संबंध में दावा किया गया है वह लगभग 10 महीने की अवधि के लिए है और एक अन्य मामले में साढे छः महीने की अतिरिक्त अवधि के लिए है। कुछ मामलों में पट्टा वर्ष 1995 में या अन्य में 1998 में समाप्त हो गया है, तो वर्ष 2001 में पट्टे के विस्तार का निर्देश देना उचित नहीं होगा खासकर जब उप-पट्टे समाप्त हो गए हों। जिसके परिणामस्वरूप पक्षकार खदानों में काम करने के लिए उन्हें अपने बुनियादी ढांचे को फिर से स्थापित करना होगा और थोड़े समय के लिए ही सही भारी मात्रा में लॉजिस्टिक समर्थन देना होगा जिसका खदानों और संबंधित पक्षों पर हानिकारक प्रभाव पड़ेगा।

(ii) पट्टों के नवीनीकरण का दावा पहले ही अस्वीकार कर दिया गया है क्योंकि सरकार की नीति निजी पार्टियों के पक्ष में पट्टा या उप-पट्टा देने की नहीं है। अब सरकार से नए सिरे से अनुबंध करने के लिए कहना उसकी नीति के विपरीत होगा।

(iii) जब हाउस कमेटी द्वारा कई कदाचारों को इंगित किया गया था तो पट्टे की अवधि को बढ़ाना सार्वजनिक हित में नहीं होगा जो इसे कायम रखेगा।

इसलिए उच्च न्यायालय को उप-पट्टे की अवधि बढ़ाने के लिए अपने विवेक का प्रयोग नहीं करना चाहिए था।

उपरोक्त कारणों से हम सोचते हैं उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए आदेश को रद्द करना और इन अपीलों को उस सीमा तक अनुमति देना उचित होगा जिस हद तक उच्च न्यायालय ने उप-पट्टों के विस्तार की राहत दी है।

जहां तक नुकसान के दावे का सवाल है, हमारे लिए इस पर निर्णय लेना अनावश्यक है क्योंकि पार्टियों के लिए यह उचित होगा कि वे उनमें से प्रत्येक द्वारा दायर किए जाने वाले सिविल मुकदमे में उचित दावा करके अपने संबंधित अधिकारों का उपयोग करें। हमने इस सवाल की जांच किए बिना कि क्या ऐसे अनुबंधों को भंग करने जिसके परिणामस्वरूप पीड़ित पक्ष क्षतिपूर्ति का हकदार है। पट्टे की अवधि के विस्तार के माध्यम से क्षतिपूर्ति की राहत से इनकार कर दिया है। इस पहलू पर उच्च न्यायालय की टिप्पणियों या निष्कर्षों से प्रभावित हुए बिना उस पहलू को सिविल मुकदमे में विचार करने या निपटाने के लिए खुला छोड़ दिया गया है। यदि ऐसा कोई सिविल मुकदमा दायर किया जाता है तो वाद का कारण केवल इस आदेश की तारीख से माना जाना चाहिए जब हमने अंततः पार्टियों के अधिकारों पर फैसला सुनाया जो संरक्षण रिट याचिकाकर्ताओं के हितों का पर्याप्त रूप से ख्याल रखेगा।

उपरोक्त टिप्पणियों के अधीन अपीलों का दूसरा सेट आंशिक रूप से स्वीकार किया जाएगा। कोई खर्चा नही।

अपीलें आंशिक रूप से स्वीकार की गईं।

यह अनुवाद आर्टिफिशल इंटेलिजेन्स टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी जगेन्द्र कुमार अग्रवाल (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए , निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा |